श्रीजिनदत्तसूरि प्राचीन पुस्तकोद्धार फंड ग्रंथांकः-४९

श्री शान्तिनाथाय नमः ।

रत्नाकर पच्चीशी ।

तथा—

श्रीमंदिर जानेकी विधि, सिद्धाचलजी के १०८ खमासमण और स्तवन आदि का संग्रह ।
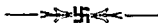
संग्राहक :—

विद्वद्वर्य श्री १००८ उपाध्याय मुनि श्री सुखसागरजी महाराज के शिष्य मुनि मंगलसागरजी

द्रव्यसहायक :—

श्रीयुत् बुलाकीचंद माणकचंद पुगलिया की तरफ से सादर भेट ।

सं० २००२] द्वितीयावृत्ति [प्रति ५००

प्रकाशक:—
श्री जिनदत्तसूरि ज्ञानभंडार
गोपीपुरा, सीतलवाडी–सुरत.

卐

मुद्रक:—
शाह. गुलाबचंद लल्लुभाई,
महोदय प्री. प्रेस–भावनगर.

पाठक गण !

यह स्तुत्यात्मक लघु ग्रंथ जो आपके करकमलों में विद्यमान है वह देखने में भले ही लघुकाय हो पर गुणों की अपेक्षा से अत्यंत बृहत्तर है, स्तुति के दृष्टि से महत्वपूर्ण है। इसमें परमोपकारी श्री जिनेश्वर भगवान् की आराधना (पूजा-भक्ति) करने का उच्च उपाय प्रदर्शित किया गया है, जो मनुष्यमात्र के लिये अत्यंत हितकर है, इसे प्राप्त करने से ही भव्यात्मा अनंत-सुख-अक्षयसुख प्राप्त कर सकते हैं। यथा—

" अर्हदाराधनैवैका सर्वकार्येषु कामधुक् "

(इति हेमचन्द्रसूरि)

वर्तमान जैन समाज में " रत्नाकर पचीशी " का इतना प्रचार हो गया है कि प्रसिद्ध प्रसिद्ध प्रान्तीय भाषाओं में भी इसके अनुदित संस्करण दृष्टिगोचर होते हैं-जैसे कि हिन्दी, गूजराती, (कर्ता-शामजी मास्टर), अंग्रेजी (कर्ता-केशवलाल प्रेमचंद मोदी), यही इसकी सर्वोत्कृष्टता के प्रत्यक्ष उदाहरण है। इस रत्नाकर पचीशी में आत्मा के द्वारा किये गये कार्यों का वर्णन याने आलोचना है। मूल संस्कृत रचना आचार्य रत्नाकरसूरिने सं १३७१ में की है, इसी रत्नाकर पचीशी को अनुलक्ष कर कई विद्वानोंने अपनी अपनी रचना की है। 卐

卐 हाल ही में एक दिगंबर शास्त्रीजीने इसी संस्कृत रत्नाकर पचीशी का केवल शब्दान्तर रूप " आत्मनिवेदन " नामक रचना की है

भिन्न भिन्न पुस्तकों से प्रस्तुत संग्रह किया गया है जिसमें मंदिर जाने की विधि आदि, चैत्री तथा कार्तिक पूनम के दिन खमासमण देनेके १०८ दोहे, और पृथक् पृथक् कवियों के प्राचीन तथा अर्वाचीन स्तवनादि का संग्रह है; तथा रत्नाकर पचीशी का अंग्रेजी अनुवाद भी दिया है; और संशोधनादि बातों का सावधानीपूर्वक ध्यान रखा गया है। तथापि स्खलना रही हो तो पाठक सुधार कर पढें। पुस्तक प्रकाशन में पूज्यगुरुवर्य श्री १००८ उपाध्याय मुनिश्री सुखसागरजी महाराज के सदुपदेश से रायपुरनिवासी श्रीयुत् बुलाकीचंदजी माणकचंदजी पुगलीयाने स्वपरश्रेयार्थ द्रव्यसहायता की है तदर्थ वे धन्यवाद के पात्र हैं। इस लघुग्रंथ द्वारा परमतारक श्री वीतरागदेव की आराधना कर पारलौकिक सुख प्राप्त करें।

प्रस्तुतः ग्रंथ की प्रथमावृत्ति समाप्त होजाने से और मांग भी अत्यन्त बढ जाने से द्वितीयावृत्ति छपायवाने की आवश्यकता हो गई।

सं० २००२ श्रा. व. १४   निवेदक :—
रायपुर (सी. पी.)   मुनि मंगलसागर

जिसमें केवल शब्दो का ही कुछ अंतर है, तथापि दिगम्बर शास्त्रीजीने अपनी कविता को पूर्वोक्त कविता से विशिष्ट और उपादेय बताने का अनुचित प्रयास किया है जो विद्वान् के लिये अत्यन्त अशोभनीय है, देखो-श्री जैन सत्यप्रकाश वर्ष ८, अंक ११, पृ० ३३९ ॥

रायपुर निवासी धर्मानुरागि
श्रीयुत् बुलाकिचंदजी पुगलियाके सुपुत्र

कँवर माणकचंदजी

KUMAR PRINTERY, AHMEDABAD

॥ श्री रत्नाकर पचीशी ॥

(श्रीमद् रत्नाकरसूरि विरचित मूल संस्कृत का)
पद्यात्मक रहस्य अनुवाद

हरिगीत छन्द

मन्दिर छो मुक्तितणा, मांगल्य क्रीडाना प्रभु,
ने इन्द्र नर ने देवता, सेवा करे तारी विभु;
सर्वज्ञ छो स्वामी वली, शिरदार अतिशय सर्वना,
घणुं जीव तुं घणुं जीव तुं, भंडार ज्ञान कलातणा.

त्रण जगतना आधार ने, अवतार हे करुणातणा,
वली वैद्य हे दुर्वार आ, संसारनां दुःखोतणा;
वीतराग वल्लभ विश्वना, तुज पास अरजी उचरुं,
जाणो छतां पण कही अने, आ हृदय हुं खाली करुं.

शुं बालको माबाप पासे, बालक्रीडा नव करे,
ने मुखमांथी जेम आवे, तेम शुं नव उचरे;
तेमज तमारी पास तारक, आज भोला भावथी,
जेवुं बन्युं तेवुं कहुं, तेमां कशुं खोटुं नथी.

मैं दान तो दीधुं नहिं, ने शियल पण पाल्युं नहि,
तपथी दमी काया नहिं, शुभ भाव पण भाव्यो नहि;
ए चार भेदे धर्ममांथी, कांई पण प्रभु नवि कर्युं,
म्हारुं भ्रमण भवसागरे, निष्फल गयुं निष्फल गयुं.

हूं क्रोध अग्निथी बल्यो, वलि लोभ सर्प डस्यो मने,
गल्यो मानरूपी अजगरे, हूं केम करी ध्यावुं तने ?;
मन मारुं माया जालमां, मोहन ! महा मुंझाय छे,
चढी चार चोरो हाथमां, चेतन घणो चगदाय छे. ५

मैं परभवे के आ भवे, पण हित कांई कर्युं नहि,
तेथी करी संसारमां सुख, अल्प पण पाम्यो नहि;
जन्मो अमारा जिनजी ! भव पूर्ण करवाने थया,
आवेल बाजी हाथमां, अज्ञानथी हारी गया. ६

अमृत झरे तुज मुखरूपी, चन्द्रथी तो पण प्रभु !,
भिंजाय नहिं मुज मन अरेरे ! शुं करुं ? हुं तो विभु !;
पत्थर थकी पण कठन मारुं, मन खरे ? क्यांथी द्रवे !,
मरकट समा आ मन थकी, हुं तो प्रभु हार्यो हवे !. ७

भमतां महा भवसागरे, पाम्यो पसाये आपना,
जे ज्ञानदर्शन चरणरूपी, रत्नत्रय दुष्कर घणा;
ते पण गया परमादना, वशथी प्रभु ! कहुं छूं खरुं,
कोनी कने किरतार ! आ, पोकार हुं जईने करुं ?. ८

ठगवा विभु आ विश्वने, वैराग्यना रंगो धर्या,
ने धर्मना उपदेश रंजन, लोकने करवा कर्या;
विद्या भण्यो हुं वाद माटे, केटली कथनी कहुं ?,
साधु थईने व्हारथी, दांभिक अंदरथी रहुं. ९

में मुखने मेलुं कर्युं, दोषो पराया गाईने,
ने नेत्रने निंदित कर्यां, परनारीमां लपटाईने;
वली चित्तने दोषित कर्युं, चिंती नठारुं पर तणुं,
हे नाथ ! मारुं शुं थशे, चालाक थई चूक्यो घणुं. १०

करे कालजाने कतल, पीडा कामनी बीहामणी,
ए विषयमां बनी अंध हुं, विडंबना पाम्यो घणी;
ते पण प्रकाश्युं आज लावी, लाज आपतणी कने,
जाणो सहु तेथी कहूं, कर माफ मारा वांकने. ११

नवकार मंत्र विनाश कीधो, अन्य मंत्रो जाणीने,
कुशास्त्रनां वाक्योवडे हणी, आगमोनी वाणीने;
कुदेवनी संगतथकी, कर्मो नकामां आचर्यां,
मतिभ्रमथकी रत्नो गुमावी, काच कटका में ग्रह्या. १२

आवेल दृष्टिमार्गमां, मूकी महावीर आपने,
में मूढधिए हृदयमां, ध्याया मदनना चापने;
नेत्रबाणो ने पयोधर, नाभि ने सुन्दर कटी,
[illegible], छटकेल थई जोयां अती.

मृगनयनी सम नारीतणा, मुखचन्द्र नीरखवावति,
मुज मन विषे जे रंग लाग्यो, अल्प पण गूढो अती;
ते श्रुतरूप समुद्रमां, धोया छतां जातो नथी,
तेनुं कहो कारण तमे, बचुं केम हुं आ पापथी ?. १४

सुन्दर नथी आ शरीर के, समुदाय गुणतणो नथी,
उत्तम विलास कला तणो, देदिप्यमान प्रभा नथी;
प्रभुता नथी तोपण प्रभु, अभिमानथी अक्कड फरुं,
चोपाट चार गतितणी, संसारमां खेल्या करुं. १५

आयुष्य घटतुं जाय तो, पण पापबुद्धि नथी घटे,
आशा जीवननी जाय पण, विषयाभिलाषा नथी मटे;
औषध विषे करुं यत्न पण, हुं धर्मने तो नवि गणुं,
बनी मोहमां मस्तान हुं, पाया विनाना घर चणुं. १६

आत्मा नथी परभव नथी, वली पुण्य पाप कशुं नथी,
मिथ्यात्वीनी कटु वाणी में, धरी कान पीधी स्वादथी;
रवि सम हता ज्ञाने करी, प्रभु आपश्री तोपण अरे,
दीवो लई कुवे पड्यो, धिक्कार छे मुजने खरे. १७

में चित्तथी नहिं देवनी, के पात्रनी पूजा चही,
ने श्रावको के साधुओनो, धर्म पण पाल्यो नहीं;
पाम्यो प्रभु नरभव छतां, रणमां रड्या जेवुं थयुं,
धोबीतणा कुत्तासमुं, मम जीवन सहु एळे गयुं. १८

हुं कामधेनु कल्पतरु, चिन्तामणिना प्यारमां,
खोटा छतां झंख्यो घणुं, बनी लुब्ध आ संसारमां;
जे प्रगट सुख देनार त्हारो, धर्म ते सेव्यो नहीं,
मुज मूर्खभावोने निहाली, नाथ! कर करुणा कंई. १९

में भोग सारां चिंतव्यां, ते रोग सम चिंत्या नहि,
आगमन इच्छ्युं धनतणुं, पण मृत्युने प्रीछ्युं नहि;
नहि चिन्तव्युं में नर्क, कारागृह समी छे नारीओ,
मधुबिन्दुनी आशामहीं, भय मात्र हुं भूली गयो. २०

हुं शुद्ध आचारोवडे, साधु हृदयमां नव रह्यो,
करी काम पर उपकारना, यश पण उपार्जन नव कर्यो;
वली तीर्थनां उद्धार आदि, कोई कार्यो नवि कर्या,
फोगट अरे! आ लक्ष, चोराशीतणा फेरा फर्या. २१

गुरुवाणीमां वैराग्यकेरो, रंग लाग्यो नहि अने,
दुर्जनतणा वाक्यो महीं, शांति मले क्यांथी मने?;
तरुं केम हुं संसार आ, अध्यात्म तो छे नहि जरी,
तुटेल तलियानो घडो, जलथी भराये केम करी.? २२

में परभवे नथी पुन्य कीधुं, ने नथी करतो हजी,
तो आवता भवमां कहो, क्यांथी थशे? हे नाथजी!;
भूत भावी ने सांप्रत त्रणे, भव नाथ! हुं हारी गयो,
स्वामी त्रिशंकु जेम हुं, आकाशमां लटकी रह्यो.

अथवा नकामुं आप पासे, नाथ शुं बकवुं घणुं ?,
हे देवताना पूज्य ! आ, चारित्र मुज पोतातणुं;
जाणो स्वरूप त्रण लोकनुं, तो माहरुं शुं मात्र आ,
ज्यां क्रोडनो हिसाब नहि,त्यां पाईनी तो वात क्यां.? २४

म्हाराथी न समर्थ अन्य, दीननो उद्धारनारो प्रभु !,
म्हाराथी नहि अन्य पात्र जगमां जोता जडे हे विभु !;
मुक्ति मंगलस्थान ! तोय मुजने इच्छा न लक्ष्मीतणी,
आपो सम्यग्रत्न श्याम जीवने तो तृप्ति थाये घणी. २५

* इति रत्नाकर पच्चीशी *

॥ स्तुतिः ॥

अर्हन्तो भगवंत इन्द्रमहिताः सिद्धाश्च सिद्धिस्थिता,
आचार्या जिनशासनोन्नतिकराः पूज्या उपाध्यायकाः ।
श्रीसिद्धान्तसुपाठका मुनिवरा रत्नत्रयाराधकाः,
पञ्चैते परमेष्ठिनः प्रतिदिनं कुर्वन्तु वो मङ्गलम् ॥

।अथ मन्दिर जानेकी तथा चैत्यवंदन करने की विधि॥

प्रथम घर से स्वच्छ वस्त्र पहिन कर साथ में चावल, ादाम, मिश्री, फल, नैवेद्य वगैरह लेकर जिनमंदिर को जावे। ंदिर के पास पहुंच कर " निसिही " कह कर मंदिर में वेश करे, फिर प्रभुको हाथ जोडकर " नमो जिणाणं " कर के बाद " निसीही "कह कर श्री भगवानके मूल गंभारे की दाहिनी तरफसे तीन प्रदक्षिणा लगावें और प्रदक्षिणा देते समय " रत्नाकर पचीसी " बोलना चाहिये। फिर प्रभु के सन्मुख खडे होकर भावनाके लिये हाथ जोड के यह दोहा पढ़े ॥

प्रभु दरसन सुख सम्पदा, प्रभु दरसन नवनिद्ध ।
प्रभु दरसनथी पामीए, सकल पदारथ सिद्ध ॥ १ ॥
भावे जिनवर पूजीए, भावे दीजे दान ।
भावे भावना भावीए, भावे केवलज्ञान ॥ २ ॥
जीवडा ! जिनवर पूजीए, पूजाना फल होय ।
राजा नमे प्रजा नमे आण न लोपे कोय ॥ ३ ॥
फूलडां केरां बागमां, बेठा श्री जिनराज ।
जिम तारामां चन्द्रमा, तिम सोहे महाराज ॥ ४ ॥
वाडी चम्पो मोगरो, सौवन कुंपलियां ।
चौविस तीर्थंकर पूजीए, पांचों आंगुलियां ॥ ५ ॥

विधि—पाट या पाटीया के ऊपर अक्षत याने चांवल से त्रण ज्ञान, दर्शन, और चरित्र, छोटी ढगलीयें करके नीचे के भाग में एक साथिया करके उस पर नैवेद्य रखे। फिर उपर वे आकार में चन्द्रमा की तरह सिद्धशिला का मंडाण मांडे जैं नीचे दिए मुजब।

(साथिया करते वखत यह दोहा बोलें)

दर्शन ज्ञान चारित्रना, आराधनथी सार।
सिद्धशिलानी उपरे, हो मुज वास श्रीकार ॥ १ ॥

चहुं गति भ्रमण संसारमां, जन्म मरण जंजाल।
पंचम गति विण जीवने, सुख नहीं त्रिहुं काल ॥ २ ॥

अक्षत स्वस्तिक पूरतां, श्री जिन आगल सार।
अक्षत फलने पामिये, अक्षय सुख दातार ॥ ३ ॥

विधि-"निसीहि" कहकर तीनवार खमासमण देवें—

"इच्छामि खमासमणो ! वंदिऊ जावणीज्जाए निसिही-आए मत्थएण वंदामि" फिर गोडालिएं बैठके और डाबा गोडा ऊंचा करके दोनों हाथ जोड कर नीचे का पाठ कहे—

'इच्छाकारेण संदिसह भगवन् ? चैत्यवंदन करुं, इच्छं'

॥ चैत्यवंदन ॥

जय ! जय ! नाभिनरिंद नंद, सिद्धाचल मंडण ।
जय ! जय ! प्रथम जिणंदचंद, भवदुःख विहंडण ॥
जय ! जय ! साधु सुरिंद वृंद, वंदिअ परमेसर ।
जय ! जय ! जगदानंदकंद, श्री ऋषभ जिणेसर ॥
अमृत सम जिनधर्मनो ए, दायक जगमें जाण ।
तुज पद पंकज प्रीतधर, निशदिन नमत कल्याण ॥

॥ जं किंचि ॥

जं किंचि नामतित्थं, सग्गे पायालि माणुसे लोए ।
जाइं जिणबिंबाइं, ताइं सव्वाइं वंदामि ॥

॥ नमोत्थुणं ॥

नमोत्थुणं अरिहंताणं, भगवंताणं । आइगराणं तित्थयराणं, सयंसंबुद्धाणं ॥ पुरिसुत्तमाणं, पुरिससीहाणं, पुरिसवरपुंडरियाणं, पुरिसवर गंधहत्थीणं ॥ लोगुत्तमाणं, लोगनाहाणं, लोगहियाणं, लोगपईवाणं लोगपज्जोअगराणं । अभयदयाणं, चक्खुदयाणं, मग्गदयाणं, सरणदयाणं, बोहीदयाणं । धम्मदयाणं धम्मदेसियाणं, धम्मनायगाणं, धम्मसारहीणं, धम्मवर–चाउरंत–चक्कवट्टीणं । अप्पडिहयवरनाणदंसणधराणं,विअ-

हुछऊमाणं । जिणाणं जावयाणं, तिन्नाणं तारयाणं, बुद्धाणं बोहयाणं, मुत्ताणं मोअगाणं । सव्वन्नूणं सव्वदरिसिणं, सिव-मयल-मरुअ-मणंत-मक्खय-मव्वाबाह-मपुणराविचिसिद्धि-गईनामधेयं ठाणं संपत्ताणं नमो जिणाणं जिअभयाणं । जेअ अईआ सिद्धा, जेअ भविस्संति णागए काले ॥ संपई अ वट्ट-माणा सव्वे तिविहेण वंदामि ॥

॥ जावंति चेईआइं ॥

जावंति चेइआइं, उड्ढेअ अहेअ तिरिअलोए अ । सव्वाइं ताइं वंदे, इह संतो तत्थ संताइं ।

॥ जावंत केवि साहू ॥

जावंत केवि साहू, भरहेरवय महाविदेहे अ । सव्वेसिं तेसिं पणओ, तिविहेण तिदंडविरयाणं ।

विधि—" नमोऽर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुभ्यः " एसा बोल कर पीछे यहां स्तवन (गायन) पढे ।

॥ स्तवन ॥

जिनराज नाम तेरा, राखुं हमारे घट में-टेर ।
जाके प्रभाव मेरा, अज्ञानका अंधेरा ।
भाग्या भया उजारा, राखुं० ॥ १ ॥
मुद्रा प्रमोदकारी, ऋषभेसजी तीहारी ।
लागत मोहे प्यारी, राखुं० ॥ २ ॥

सुरत तेरी रागे, देख्या विभाव त्यागे ।
अध्यातमरूप जागे, राखुं० ॥ ३ ॥

त्रिलोक्यनाथ तुम ही, हम हे अनाथ गुन ही ।
करीये सनाथ हम ही, राखुं० ॥ ४ ॥

जिनजी तीहारी शाखें, जिन हर्षसूरि भापे ।
दीलमां जयां ही राखे, राखुं० ॥ ५ ॥

विधि—बाद में दोंनों हाथ जोड करके मस्तक में अंजली लगाकर " जय वीयराय " पढें—

॥ जय वीयराय ॥

जय वीयराय ! जगगुरु ! होउ ममं तुह पभावओ भयवं ! भवनिवेओ मग्गा णुसारिया इट्ठफलसिद्धि ॥ १ ॥ लोगविरुद्धचाओ, गुरुजणपूआ परत्थकरणं च । सुहगुरुजोगो तव्वयण-सेवणा आभवमखंडा ॥ २ ॥

विधि—पिछे खडे होकर हाथ जोडके नीचे का पाठ कहे।

॥ अरिहंतचेइआणं ॥

अरिहंतचेइआणं करेमि काउस्सग्गं । वंदणवत्तिआए, पूअणवत्तिआए, सक्कारवत्तिआए, सम्माणवत्तिआए बोहिलाभवत्तिआए निरुवसग्गवत्तिआए । सद्धाए मेहाए धीईए धारणाए अणुप्पेहाए वड्ढमाणीए ठामि काउस्सग्गं ।

एणी परे जिनप्रतिमा को न्हवण करी, बोधि बीज मानु वावे
अनुक्रमे गुण रत्नाकर फरसी, जिन उत्तम पद पावे हो । सुर

चंदन— शीतल गुण जेहमां रह्यो, शीतल प्रभु मुखरंग ।
आत्म शीतल करवा भणी, पूजो अरिहा अंग ॥

नव अंग पूजा के दोहा

अंगूठा—जल भरी संपुट पत्रमां, युगलिक नर पूजंत ।
ऋषभ चरण अंगूठडो, दायक भवजल अंत ॥

गुटना—जानु बले काउस्सग्ग रह्या, विचर्या देशविदेश ।
खडां खडां केवल लह्यु, पूजो जानु नरेश ॥

हाथ— लोकांतिक वचने करी, वरस्या वरसी दान ।
कर कांडे प्रभु पूजना, पूजो भवी बहुमान ॥

खंभा— मान गयुं होय अंशथी, देखी वीर्य अनंत ।
भूजाबले भवजल तर्या, पूजो खंध महंत ॥

मस्तक—सिद्धशिला गुण उजली, लोकांते भगवंत ।
वसीया तेणे कारण भवी, शीरशिखा पूजंत ॥

लीलाड—तीर्थंकर पद पुण्यथी, त्रिभुवन जन सेवंत ।
त्रिभुवन तिलक समा प्रभु, भाल तिलक जयवंत ॥

कंठ— सोल पहोर प्रभु देशना, कंठ विवर वर्तुल ।
मधुर ध्वनि सुर नर सुणे, तीणे गले तिलक अमूल ॥

हृदय— हृदय कमल उपशम धले, वाल्या राग ने रोप ।
हिम दहे वनखंडने, हृदय तिलक संतोष ॥

नाभि— रत्नत्रयी गुण उजली, सकल सुगुण विश्राम ।
नाभि कमलनी पूजना, करता अविचल धाम ॥

पुष्प— सुरभि अखंड कुसुम ग्रही, पूजो गत संताप ।
सुमजंतु भव्यज परे, करिये समकित छाप ॥

धूप— ध्यानघटा प्रगटावीये, वाम नयन जिन धूप ।
मिच्छत दुर्गंध दूरे टले, प्रगटे आत्म स्वरूप ॥

दीपक— द्रव्य दीप सुविवेकथी, करतां दुःख होय फोक ।
भाव प्रदीप प्रगट हुवे, भासित लोकालोक ॥

अक्षत— शुद्ध अखंड अक्षत ग्रही, नंदावर्त विशाल ।
पूरी प्रभु सन्मुख रहो, टाली सकल जंजाल ॥

नैवेद्य— अणहारी पद में करयां, विग्गह गइय अनंत ।
दूर करि ते दीजीए, अणाहारी शिवसंत ॥

फल— इन्द्रादिक पूजा भणी, फल लावे धरी राग ।
पुरुषोत्तम पूजी करी, मागे शिवफल त्याग ॥

चाँवर— प्रभु पासे चाँवर धरी, ढाले इंद्र उल्लास ।
तिम आपन मन सुद्ध करी, करो चाँवर तास ॥

॥ इति ॥

श्री सिद्धाचलजीके एकसो आठ खमासमण के दो

सिद्धाचल समरुं सदा, सोरठ देश मोझार,
मनुष्य जनम पामी करी, वंदु वार हजार ॥
कार्तिक सुद पुनम दिने, दश कोटि परिवार,
द्राविड ने वारि खिल्लजी, सिद्ध थया निरधार ॥
तिण कारण कार्तिक दिने, संघ सकल परिवार,
आदिदेव सन्मुख रही, खमासमण धो बहु वार ॥

ईच्छामि खमासमणो ! वंदिउं जावणीज्जाए ।
निसिहीआए मत्थएण वंदामि ॥

समोसर्या सिद्धाचले, पुंडरिक गणधार,
लाख सवा महातम कह्युं, सुरनर सभा मझार ॥
चैत्री पुनमने दिने, करी अणसण एक मास,
पांच कोडि मुनि साथशुं, मुक्तिनिलयमां वास ॥
तिणे कारण पुंडरिक गिरी, नाम थयुं विख्यात,
मन वच काये वंदिये, उठी नित्य प्रभात ॥

ईच्छामि खमासमणो ! वंदिउं जावणीज्जाए ।
निसिहीआए मत्थएण वंदामि* ॥

---

*यहां से आगे एक एक दोहा बोले और सिद्धाचल स० बोल के एक एक खमासमण दे याने १०८ दफे नमस्कार करे।

दोहाः—१०८

श्री आदीश्वर अजर अमर, अव्याबाध अहर्निश ।
परमातम परमेसरु, प्रणमुं परम मुनीश ॥ १ ॥

जय जय जगपति ज्ञानभान, भासित लोकालोक ।
शुद्धस्वरूप समाधिमय, नमित सुरासुर थोक ॥ २ ॥

श्रीसिद्धाचल मंडणो, नाभिनरेसर नंद ।
मिथ्यामति मत भंजणो, भविकुमुदाकर चंद ॥ ३ ॥

पूर्व नवाणुं जश शिरें, समवसर्या जगनाथ ।
ते सिद्धाचल प्रणमियें, भक्ते जोडी हाथ ॥ ४ ॥

अनंत जीव इण गिरिवरें, पाम्या भवनो पार ।
ते सिद्धाचल प्रणमियें, लहियें मंगलमाल ॥ ५ ॥

जस शिर मुकुट मनोहरु, मरुदेवीनो नंद ।
ते सिद्धाचल प्रणमियें, रिद्धि सदा सुखवृंद ॥ ६ ॥

महिमा जेहनो दाखवा, सुरगुरु पण मतिमंद ।
ते तीरथेश्वर प्रणमियें, प्रगटे सहजानंद ॥ ७ ॥

सत्ताधर्म समारवा, कारण जेह पडूर ।
ते तीरथेश्वर प्रणमियें, नासे अघ सवि दूर ॥ ८ ॥

कर्मकाट सवि टालवा, जेहनुं ध्यान हुताश ।
ते तीरथेश्वर प्रणमियें, पामीजे सुखवास ॥ ९ ॥

परमानंद दशा लहे, जस ध्याने मुनिराय ।
ते तीरथेश्वर प्रणमिये, पातक दूर पलाय ॥ १० ॥

श्रद्धाभासन रमणता, रत्नत्रयीनुं हेतु ।
ते तीरथेश्वर प्रणमिये, भव मकराकर सेतु ॥ ११ ॥

महापापी पण निस्तर्यां, जेहनुं ध्यान सुहाय ।
ते तीरथेश्वर प्रणमिये, सुर नर जस गुण गाय ॥ १२ ॥

पुंडरिक गणधर प्रमुख, सीधा साधु अनेक ।
ते तीरथेश्वर प्रणमिये, आणी हृदय विवेक ॥ १३ ॥

चंद्रशेखर स्वयंपति, जेहने संगे सिद्ध ।
ते तीरथेश्वर प्रणमिये, पामीजे निज रिद्ध ॥ १४ ॥

जलचर खेचर तिरिय सवे, पाम्या आतम भाव ।
ते तीरथेश्वर प्रणमिये, भवजल तारण नाव ॥ १५ ॥

संघयात्रा जेणे करी, कीधा जेणे उद्धार ।
ते तीरथेश्वर प्रणमिये, छेदीजे गति चार ॥ १६ ॥

पुष्टिशुद्ध संवेग रस, जेहने ध्याने थाय ।
ते तीरथेश्वर प्रणमिये, मिथ्यामति सब जाय ॥ १७ ॥

सुरतरु सुरमणि सुरगवि, सुरघट सम जस ध्याव ।
ते तीरथेश्वर प्रणमिये, प्रगटे शुद्ध स्वभाव ॥ १८ ॥

सुरलोके सुरसुंदरी, मलि मलि थोके थोक ।
ते तीरथेश्वर प्रणमिये, गावे जेहना श्लोक ॥ १९ ॥

योगीश्वर जस दर्शनें, ध्यान समाधि लिन ।
ते तीरथेश्वर प्रणमियें, हुआ अनुभव रस लीन ॥ २० ॥

मानुं गगनें सूर्य शशी, दिये प्रदक्षिणा नित्य ।
ते तीरथेश्वर प्रणमियें, महिमा देखण चित्त ॥ २१ ॥

सुर असुर नर किन्नरा, रहे छे जेहनी पास ।
ते तीरथेश्वर प्रणमियें, पामे लीलविलास ॥ २२ ॥

मंगलकारी जेहने, मृतका हारिमेट ।
ते तीरथेश्वर प्रणमियें, कुमति कदाग्रह मेट ॥ २३ ॥

कुमति कौशिक जेहने, देखी झांखा थाय ।
ते तीरथेश्वर प्रणमियें, सवि तस महिमा गाय ॥ २४ ॥

सूरजकुंडना नीरथी, आधि व्याधि पलाय ।
ते तीरथेश्वर प्रणमियें, जस महिमा न कहाय ॥ २५ ॥

सुंदर टूंक सोहामणी, मेरु सम प्रासाद ।
ते तीरथेश्वर प्रणमियें, दूर टले विखवाद ॥ २६ ॥

द्रव्य भाव वैरी तणा, जिहां आवे होय शांत ।
ते तीरथेश्वर प्रणमियें, जाये भवनी भ्रांत ॥ २७ ॥

जगहितकारी जिनवरा, आव्या एणें ठाम ।
ते तीरथेश्वर प्रणमियें, जस महिमा उदाम ॥ २८ ॥

नदी शेत्रुंजी स्नानथी, मिथ्यामत धोवाय ।
ते तीरथेश्वर प्रणमियें, सवि जनने सुखदाय ॥ २९ ॥

आठ कर्म जे सिद्धगिरि, न रहे तास विपाक ।
ते तीरथेश्वर प्रणमिये, जिहां नहि आवे काक ॥ २० ॥

सिद्धशिला तपनीयमय, रत्नस्फटिक खाण ।
ते तीरथेश्वर प्रणमिये, पाम्या केवल नाण ॥ २१ ॥

सोवन रूपा रत्ननी, औषधि जात अनेक ।
ते तीरथेश्वर प्रणमिये, न रहे पातक एक ॥ २२ ॥

संयमधारी संयमे, पावन होय जिन गेह ।
ते तीरथेश्वर प्रणमिये, देता निर्मल नेह ॥ २३ ॥

श्रावक जिहां शुभ द्रव्यथी, उत्सव पूजा स्नात्र ।
ते तीरथेश्वर प्रणमिये, पोषे पात्र सुपात्र ॥ २४ ॥

महाभिरम्मल पुष्प जिहां, अनंतगुणुं वर्द्धनाय ।
ते तीरथेश्वर प्रणमिये, सोवन फूल वधाय ॥ २५ ॥

सुंदर जात्रा जेहनी, देखी हरखे चित्त ।
ते तीरथेश्वर प्रणमिये, त्रिभुवनमांहि विदित ॥ २६ ॥

पालीताणुं पुर भलुं, सरोवर सुंदरपाल ।
ते तीरथेश्वर प्रणमिये, जावे सकल जंजाल ॥ २७ ॥

मनमोहन पागे चढे, पग पग कर्म खपाय ।
ते तीरथेश्वर प्रणमिये, गुण गुणिभाव लखाय ॥ २८ ॥

जेणे गिरि रुख सोहामणा, कुंडे निर्मल नीर ।
ते तीरथेश्वर प्रणमिये, उतारे भवतीर ॥ २९ ॥

मुक्तिमंदिर सोपान सम, सुंदर गिरिवर पाज ।
ते तीरथेश्वर प्रणमियें, लहिये शिवपुर राज ॥ ४० ॥

कर्म कोटि अघ विकटभट, देखी धूजे अंग ।
ते तीरथेश्वर प्रणमियें, दिन दिन चढते रंग ॥ ४१ ॥

गौरी गिरिवर उपरें, गावे जिनवर गीत ।
ते तीरथेश्वर प्रणमियें, सुखे शासनरीत ॥ ४२ ॥

कवड यक्ष रखवाल जस, अहोनिश रहे हजूर ।
ते तीरथेश्वर प्रणमियें, असुरां राखे दूर ॥ ४३ ॥

चित्त चातुरी चक्रेश्वरी, विघ्न विनासणहार ।
ते तीरथेश्वर प्रणमियें, संघतणी करे सार ॥ ४४ ॥

सुरवरमां मघवा यथा, ग्रहगणमां जिम चंद ।
ते तीरथेश्वर प्रणमियें, तिम सवि तीरथ इंद ॥ ४५ ॥

दीठे दुर्गति वारणो, समर्या सारे काज ।
ते तीरथेश्वर प्रणमियें, सवि तीरथ शिरताज ॥ ४६ ॥

पुंडरीक पंच कोडीशुं, पाम्या केवलनाण ।
तें तीरथेश्वर प्रणमियें, कर्मतणी होय हाण ॥ ४७ ॥

मुनिवर कोडी दश सहित, द्राविड अने वारिखेण ।
ते तीरथेश्वर प्रणमियें चढिया शिव निश्रेण ॥ ४८ ॥

नमि विनमि विद्याधरा, दोय कोडी मुनि साथ ।
ते तीरथेश्वर प्रणमियें, पाम्या शिवपुर आथ ॥ ४९ ॥

जग जोतां तीरथ सवे, ए सम अवर न दीठ ।
ते तीरथेश्वर प्रणमियें, तीर्थमांहे उक्किठ　　॥ ६० ॥

धन धन सोरठ देश जिहां, तीरथमांहे सार ।
ते तीरथेश्वर प्रणमियें, जनपदमां शिरदार　　॥ ६१ ॥

अहोनिश आवत ढुकडा, ते पण जेहने संग ।
ते तीरथेश्वर प्रणमियें, पाम्या शिव वधु रंग　　॥ ६२ ॥

विराधक जिनआणना, पण हुआ विशुद्ध ।
ते तीरथेश्वर प्रणमियें, पाम्या निर्मल बुद्ध　　॥ ६३ ॥

महाम्लेछ शासन रिपु, ते पण हुआ उपशांत ।
ते तीरथेश्वर प्रणमियें, महिमा देखी अनंत　　॥ ६४ ॥

मंत्र योग अंजन सवे, सिद्ध हुवे जिण ठाम ।
ते तीरथेश्वर प्रणमियें, पातकहारी नाम　　॥ ६५ ॥

सुमति सुधारस वरसतें, कर्मदावानल संत ।
ते तीरथेश्वर प्रणमियें, उपशम तस उल्लसंत　　॥ ६६ ॥

श्रुतधर नितु नितु उपदिशे, तत्वातत्व विचार ।
ते तीरथेश्वर प्रणमियें, ग्रहे गुणयुत श्रोतार　　॥ ६७ ॥

प्रियमेलक गुणगण तणुं, कीरतिकमला सिंधु ।
ते तीरथेश्वर प्रणमियें, कलिकाले जगबंधु　　॥ ६८ ॥

श्री शांति तारणतरण, जेहनी भक्ति विशाल ।
ते तीरथेश्वर प्रणमियें, दिन दिन मंगलमाल　　॥ ६९ ॥

नेम विना जिनवर सवे, आव्या छे जिण ठाम ।
ते तीरथेश्वर प्रणमियें, शुद्ध करे परिणाम ॥ ८० ॥

नमि नेम जिन अंतरें, अजित–शांतिस्तव कीद्ध ।
ते तीरथेश्वर प्रणमियें, नंदिषेण प्रसिद्ध ॥ ८१ ॥

गणधर मुनि उवज्झाय तिम, लाभ लह्या केई लाख ।
ते तीरथेश्वर प्रणमियें, ज्ञानअमृत रस चाख ॥ ८२ ॥

नित्य घंटा टंकारवें, रणझणे झल्लरी नाद ।
ते तीरथेश्वर प्रणमियें, दुंदुभि मादल नाद ॥ ८३ ॥

जेणे गिरी भरत नरेश्वरे, कीधो प्रथम उद्धार ।
ते तीरथेश्वर प्रणमियें, मणिमय मूरत सार ॥ ८४ ॥

चौमुख चउगति दुःख हरे, सोवनमय सुविहार ।
ते तीरथेश्वर प्रणमियें, अक्षय सुख दातार ॥ ८५ ॥

इत्यादिक महोटा कह्या, सोल उद्धार सफार ।
ते तीरथेश्वर प्रणमियें, लघु असंख्य विचार ॥ ८६ ॥

द्रव्यभाव वैरी तणो, जेहथी थाये अंत ।
ते तीरथेश्वर प्रणमियें, शत्रुंजय समरंत ॥ ८७ ॥

पुंडरीक गणधर हुआ, प्रथम सिद्ध इणे ठाम ।
ते तीरथेश्वर प्रणमियें, पुंडरीकगिरि नाम ॥ ८८ ॥

कांकरे कांकरे इणे गिरि, सिद्ध हुआ सुपवित्त ।
ते तीरथेश्वर प्रणमियें, सिद्धक्षेत्र समचित्त ॥ ८९ ॥

शिवगति साधे जे गिरे, ते माटें अभिधान ।
ते तीरथेश्वर प्रणमियें, मुक्तिनिलय गुणखाण ॥ १०० ॥

चंद्र सूरज समकितधरा, सेव करेत शुभ चित्त ।
ते तीरथेश्वर प्रणमियें, पुष्पदंत विदित ॥ १०१ ॥

भिन्न रहे भवजलथी, जे गिरि लहे निवास ।
ते तीरथेश्वर प्रणमियें, महापदम सुविलास ॥ १०२ ॥

भूमिधरा जे गिरिवरें, उदधि न लोपे लीह ।
ते तीरथेश्वर प्रणमियें, पृथ्वीपीठ अनीह ॥ १०३ ॥

मंगल सवि मलवातणुं, पीठ एह अभिराम ।
ते तीरथेश्वर प्रणमियें, भद्रपीठ जस नाम ॥ १०४ ॥

मूल जस पातालमें, रत्नमय मनोहार ।
ते तीरथेश्वर प्रणमियें, पातालमूल विचार ॥ १०५ ॥

कर्मक्षय होवे जिहां, होय सिद्ध सुखकेल ।
ते तीरथेश्वर प्रणमियें, अकर्म करे मन मेल ॥ १०६ ॥

कामित सवि पूरण होये, जेहनुं दरिसण पाम ।
ते तीरथेश्वर प्रणमियें, सर्वकाम मन ठाम ॥ १०७ ॥

इत्यादि एकवीश भलां, निरुपम नाम उदार ।
जे समर्यां पातक हरे, आत्म शक्ति अनुहार ॥ १०८ ॥

श्री सिद्धाचल स्तवन।

श्री सिद्धाचल मंडन स्वामी रे, जगजीवन अंतरजामी रे।
ए तो प्रणमुं हुं शिरनामी, जात्रीडा जात्रा नवाणु करिये रे—
एतो करिये तो भवजल तरिये ॥ जा० ॥

श्री ऋषभ जिनेश्वर राया रे, जिहां पूर्व नवाणुं आया रे।
प्रभु समवसर्या सुखदाया ॥ जात्रीडा जा० ॥ २ ॥

चैत्री पुनम दिन वखाणुं रे, पांच कोडीसुं पुंडरीक जाणुं रे।
जे पाम्या पद निरवाणुं ॥ जात्रीडा जा० ॥ ३ ॥

नमि विनमि राजा सुख साते रे, बे बे कोडी साधु संघाते रे।
एतो पहोता पद लोकांते ॥ जात्रीडा जा० ॥ ४ ॥

काति पूनमें कर्मने तोडी रे, जिहां सिद्धा मुनि दश कोडी रे।
ते तो वंदो बेकर जोडी ॥ जात्रीडा जा० ॥ ५ ॥

इम भरतेसरने पाटेरे, असंख्याता मुनि थीर थाटेरे।
पाम्या मुगति रमणी ए वाटे ॥ जात्रीडा जा० ॥ ६ ॥

दोय सहस मुनि परिवार रे, थावच्चासुत सुखकार रे।
सय पंच सेलग अणगार ॥ जात्रीडा जा० ॥ ७ ॥

वली देवकीसुत सुजगीसरे, सिद्धा बहु जादव वंश रे।
ते प्रणमुं रे मन हंस ॥ जात्रीडा जा० ॥ ८ ॥

पांचे पांडव एणे गिरि आया रे, सिद्धा नव नारद ऋषिराया रे।
वली सांब प्रद्युम्न कहाया ॥ जात्रीडा जा० ॥ ९ ॥

हुं पापी छुं नीच गति गामी, कंचनगिरिनुं शरणुं पामी ।
तरशुं जरूर, जिनने क्रोडों प्रणाम ॥ सिद्धाचल० ॥ ३ ॥

अणधार्या आ समयमां दर्शन, करतां हृदय थयुं अति परसन ।
जीवन उज्ज्वल, जिनने क्रोडों प्रणाम ॥ सिद्धाचल० ॥ ४ ॥

गोड़ी पार्श्वजिनेश्वरकेरी, करण प्रतिष्ठा विनति घणेरी ।
दर्शन पाम्यो मानी, जिनने क्रोडों प्रणाम ॥ सिद्धाचल० ॥ ५ ॥

संवत उगणीसे नेवुं वर्षे, शुद पंचमी कर्या दर्शन हर्षे ।
मल्यो जेष्ठ शुभ मास, जिनने क्रोडों प्रणाम ॥ सिद्धाचल० ॥ ६ ॥

आतमकमलमां सिद्धगिरि ध्याने, जीवन मलसे केवलज्ञाने ।
लब्धिसूरि शिव धाम, जिनने क्रोडों प्रणाम ॥ सिद्धाचल० ॥ ७ ॥

॥ श्री पार्श्वनाथ स्तवन ॥

(तर्जः—राखियां बंधावो भैयां)

जिनजीको ध्यावो भैयां, गुण गण गावोरे ।
मूरत प्रभु की भाली, सूरत निराली ।
तारे तुम्हारी नैयां, जय जगदीवोरे ॥ जिनजी० ॥
पूजनकी थारी, लगी है लय भारी ।
जगमां तुम्हारी जईयां, जय जगदीवोरे ॥ जिनजी० ॥
दुरगतिने दारी, आतम गुणकारी ।
कर्मोनि धावो खइयां, जय जगदीवोरे ॥ जिनजी० ॥

गुणोंकी श्रेणी आली, देती है दुःख टारी।
सेवो सदाए सइयां, जय जगदीशोरे ॥ जिनजी० ॥

पार्श्व जिनन्दासे, प्रीत लगी है मोरे।
लब्धिसूरि गुण गइयां, जय जगदीशोरे ॥ जिनजी० ॥

॥ प्रभु के स्तवन ॥

(तर्ज.-पतंग बावरिया)

जिनवर नावरिया, नैया पार लगादे रे ॥ जिन० ॥
भक्ति का रंग लगादे, जीना दो दिनका।

दुःखी है दुनिया दुःख मजाना, कहीं है हंसना कहीं है रोना।
राह झमेला जगाय रे ॥ जिनवर० ॥ १ ॥

मिलनेवाले मिली प्रभु से, पार लगा दे प्रभु भवजल से।
जैसे ही नाविक नैया रे ॥ जिनवर० ॥ २ ॥

जग माया के पास फंसाना, केई मुंझाना केई लुभाना।
जीवन यूं ही गंवाया रे ॥ जिनवर० ॥ ३ ॥

यह संसार मुसाफिरखाना, फिर फिर आना फिर फिर जाना।
भक्ति सरिता बहाय रे ॥ जिनवर० ॥ ४ ॥

कर्मपिंजर में नहीं फंसाना, आत्मकमल में लब्धि बसाना।
मुक्तिनगर मिल जाय रे ॥ जिनवर० ॥ ५ ॥

(तर्ज:-जिन्दगी है प्यारसे)

बंदगी है नाथसे इसको निभाये जा,
प्रभुके मजूर हो दुःख को मिटाये जा,
सुखमें लिटाय जा ॥ बंदगी० ॥
बंदगी है एक साज मिले तीन लोकराज,
यह जीवन है कितनी देर सेवामें मिलाये जा,
प्रभुसे हिलाये जा ॥ बंदगी० ॥ १ ॥
भज लो अनाथ नाथ बिन बंधुके हैं साथ,
जिनप्रभुकी सची म्हेर जीवन को लहराये जा,
दिल को बहलाये जा ॥ बंदगी० ॥ २ ॥
जिन्दगी के ए है ताज खरे देव जिनराज,
लट्टो शब्द लब्धि ल्हेर आत्म को खिलाये जा
ज्ञानको पिलाय जा ॥ बंदगी० ॥ ३ ॥

(तर्ज:-चल चलरे नौजवान)

ाज भजरे भाग्यवान, पाना हो सुज्ञानदान ॥ भज० ॥ १ ॥
[र प्रभु धाम, गुणोंका है काम,
ोर मी अहर्निश, भज तुं विश्वाविश,
वेषय तेरा स्थान नहीं, धरना प्रभु ध्यान, ॥ भज० ॥ २ ॥
[वीर प्रभु ध्या, और शिवसुख पा,
ंधेर है अज्ञान, डूबी सब जहान,

हुं आतम कमलमें, प्रभु लब्धिसूरि ले,
निकट तेरा स्थान, आवे ठिकाने भान ॥ भज० ॥ ३ ॥

(तर्ज:-बिछुडारी पालो पीयर चाली हो)

नेम प्रभुके कारण बनमें चाली हो सांवरिया ।
आच्छो लागे डूंगरियो सवायो लागे डूंगरियो ॥ टेर ॥
जूनागढ़ सेस्सावन प्रभुजी आये हो सांवरिया ।
आछो लागे डूंगरियो स० ॥ नेम० ॥ १ ॥
तोरण पर आयोड़ा पीछा फिरिया हो सांवरिया ।
आछो लागे डूंगरियो स० ॥ नेम० ॥ २ ॥
पशुवन कीनी करुणा दिलमें धारी हो सांवरिया ।
आछो लागे डूंगरियो स० ॥ नेम० ॥ ३ ॥
सरन तोरे शरणे आयो, तारो हो सांवरिया ।
आछो लागे डूंगरियो स० ॥ नेम० ॥ ४ ॥

(तर्ज-अब तेरे सीवा कौन मेरा)

अब तेरे सीवा कौन मुझे भव से रोथैया,
भगवान तीरा दे तुं भव पार ए भैया ।
सुनी थी मैंने वाणी अमृत की बेली थी,
अंगर की सीता जैसी बुध्धि की बेली थी ।
अब तो श्री गुरु नाथ मेरे भव से तरैया,
भगवान तीरा दे तु भवपार ने भैया ॥ अब० ॥

तीराना है मोहे भवसे यह आश अंत की,
हो नाथ प्यारे मुझ को हो संग संत की।
कहेता हुं बार बार त्रिशला के दुलैया,
भगवान तीरा दे तुं भव पार ए नैया ॥ अब० ॥

मुक्ति मिलादो नाथ प्यारे ज्ञान विहारी,
आत्मकमल की लब्धि सोहे ध्यान विहारी।
भव से तीराना अब तो मोहे धर्म दीपैया,
भगवान तीरा दे तु भव पार ए नैया ॥ अब० ॥

॥ नवपद स्तवन ॥

श्री सिद्धचक्र आराधो, मनवाँछि कारज साधो रे।
भवियाँ श्री सिद्धचक्र आराधो ॥ ए टेर ॥
पद पहिले अरिहंत ध्यावो, जेम अरिहंत पदवी पावो रे॥भ०श्री०॥
पद दुजे सिद्ध मनावो, जिम सिद्ध सरूपी होई जावो रे॥भ०श्री०॥
सूरि त्रीजे गुणवंता, जगनायक जग जयवंता रे ॥ भ० श्री० ॥
चोथे पद उवझाया, जिन मारग आण बताया रे ॥ भ० श्री० ॥
साधु सकल गुणधारी, पद पंचमे जग हितकारी रे ॥ भ० श्री०॥
दरशण पद छट्ठे वन्दो, जेम कीरति होय चिर नन्दो रे ॥भ०श्री०॥
ज्ञान पद सातमे दाख्यो, चारित्र पद आठमे भाख्यो रे॥भ०श्री०॥
तप नवमे पद चाख्यो, जेम वीरने वचने राख्यों रे ॥ भ०श्री० ॥

श्रीपाल ने मयणा लीधो, नवमे भव कारज सीधो रे ॥ भ०श्री०॥
नवपद महिमा जाणी, जिनचंद्र हिये मन आणी रे ॥भ०श्री०॥

(तर्जः-रखीयां बंधावो भैया, सावन०)

रथना फिरावो स्वामी, अंतरजामी रे ।
अंतरजामी रे, कहुं शिरनामी रे ॥ रथ० ॥ टेर ॥

जादव कुलना जाया, नेमि जिनेसर राया ।
मारा हृदयमां लाग्या, तुम पडछाया रे ॥ रथ० ॥ १ ॥

भोजाइओ भेगी थईने, जलथी गभरावी दईने ।
स्हेजे हसाव्या त्यारे, लगन ठराव्यां रे ॥ रथ० ॥ २ ॥

वरघोडे चढीने आव्या, राधा रुखमणी गाया ।
वांधो पड्यो शुं एवो, के वचका यारे ॥ रथ० ॥ ३ ॥

जेम तेम करीने आव्या, त्रिकम तोरणीये लाव्या ।
त्याये पशुना स्वरनां, व्हानां बताव्या रे ॥ रथ० ॥ ४ ॥

जे हाथे हाथ न आपो, शिरपर संजममां थापो ।
शिवमां सदाए साथे, चंद्र आलापो रे ॥ रथ० ॥ ५ ॥

(तर्जः-मेरे बिछुडे हुवे साथी)

मेरे दीलके प्यारे जिनजी, तेरी मुक्ति दिखा दे ।
वार वार सिमरण है तेरा, भव वन दाह बुझा दे ॥ मे० ॥१॥

जपते जपते जच जाता है, जिनवर जव तव बच जाता है ।
मिट जावे मरघट तव चेतन, ज्योति जगा दे ॥ मे० ॥ २ ॥
कषाय वश कर तुम्हे वसाया, अंतर दुर्मति दुर नसाया ।
याद रहे तसवीर तुम्हारी, दीलको वहला दे ॥ मे० ॥ ३ ॥
रीत प्रीत जिन की कोउन जाने, मित वन सबका जिन पहिचाने।
तव नही जिन से दूर है हम, लब्धि ल्हेर वहा दे, प्रभु ल०॥मे०॥४

(तर्ज:-आज हिमालय की चोटी मे०)

आज शांतिजिन दर्शन कर के यह हमने पोकारा है,
दूर हटो, दूर हटो,(३) अय ! मायावाले ! धार्मिक भाव हमारा है ।
जहां हमारा राज आतम है और ज्ञान सतारा है,
जहां हमारा चरण करण है, भव से झट निस्तारा है ।
उस धरम पर प्रेम बढाना, अत्याचार से न्यारा है ॥ दूर० ॥१॥
मील्या भाग्य से जिनजी प्यारा, भक्ति में हो मस्ताना;
राग द्वेष को छोडो जल्दी, नहीं पडे फिर पस्ताना ।
आत्मकमल में लब्धि प्यारा, मीले मुक्ति मिवारा है ॥ दूर० ॥ २ ॥

(तर्ज:-तुमपे लाखो सलाम.)

वीर प्रभुनी जन्म जयंती आजे उजवीये....(२) टेर.
चैत्र सुदी तेरस दिन सारा, त्रण जगतमां आनंदकारा ।
जनम्या वीर कुमार, जयंती आजे उजवीये (२) वी० ॥

त्रिशला देवी नंदन प्यारा, सिद्धारथ के कुल में हारा ।
सुखी हुवे नरनार, जयंती आजे उजवीये (२) वी० ॥

चोसठ इंद्रो प्रेमे आवे, गणधर मुनिवर प्रभु गुण गावे ।
वरत्यो जय जयकार, जयंती आजे उजवाये (२) वी० ॥

दीक्षा ले बहु परिसह सहके, कठीन कर्मो सघला दहके ।
पाम्या केवलज्ञान, जयंती आजे उजवीये (२) वी० ॥

समोसरण देवोए ठाव्या, सुरनर तिर्यंच सघला आया ।
दीनी देशना सार, जयंती आजे उजवीये (२) वी० ॥

आत्म कमलमां लब्धि साधी, ययंतनी सब टालो उपाधि ।
लेवा मोक्ष दुवार, जयंती आजे उजवीये (२) वी० ॥

(तर्ज-दूर चलाचल तु कहि दू.)

प्रीत कीया कर तु, सदा प्रीत कीया कर ।
जिनजी अजित से (तु), प्रीत कीया कर ॥
वहां प्यार है उजीयार है, अंधीयार नहि है ।
सचां वही सुखकार है, दुःखकार नहि है ॥
प्रीत कर के तु तेरी जीत कीया कर-जिनजी० ॥

जो मूर्ख है क्या जाने यह सत्य की बातें ।
सत्य की बातों से हरे मोह की रातें ॥
झूठ छोड सत्य की तुं रीत कीया कर-जिनजी० ॥

हरदम हो तेरे दील में छबी जिन की प्यारी।
पार हो जाये जीवन की नाव तुमारी ॥
नित्य यशोभद्र प्रभु गीत कीया कर—जिनजी० ॥

(तर्जः-मेरी आदका तम अ०)

तुम्हें नाथ नैया तिरानी पड़ेगी ॥
तिरानी पड़ेगी तिरानी पड़ेगी । तुम्हें० । टेर ।
तारण तरण है विरुद तुम्हारो ।
डूबती नैया तिरानी पड़ेगी ॥ तुम्हें० ॥
भवसागर में डूबी जो नैया ।
तेरे विरुद्ध में खामी पड़ेगी ॥ तुम्हें० ॥
"हरीकचीन्द्र" की यही बीनती ।
मुक्तिनगरियां दिखानी पड़ेगी ॥ तुम्हें० ॥

(कव्वाली)

तुम्हारी मोहनी मूरत मेरे दिलमें समाई है ॥ टेर ॥
नदिन को चेन पहल में, न सबको नींद आती है ।
न जाने आपने दर्शनकी, मय कैसी पीलाई है ॥तु०॥१॥
दिया मैं त्याग जगफानी, फकीरी वेप धारा है ।
नजर जादूभरी जबसे, हमें तुमने दिखाई है ॥तु०॥२॥

विचरता हूं कभी तनमें, कभी वस्ती कभी वनमें ।
जहां सारा रही भटका, मुझे तेरी जुदाई है ॥तु०॥३॥
नहीं ताकत मेरे पेरोंमें, अब दर दर भटकने की ।
तिलक को नाम बस हरदम, एक तेरा सहाई है ॥तु०॥४॥

(तर्जः-देखो देखोजी बदरवा का है)

देखो देखोजी जीयरवा क्योए प्रभुजी न गाये;
भूल गये क्यों इनको भैयां, अवहु न भाये, [दे० ।
खोये खोये समरो भाइ, उनकी याद न आवे;
भक्तिभावे वास वसावुं, तो जिनजी दिल आवे । दे० ।
करम हरत तुम सैयां, चाले शिवपुर नैया;
आत्म कमलमें तुमको लैया, लब्धि पार होवे तब भैया ।दे०।

(तर्जः-आये भी वो, गये भी वो)

गावे भी वो, ध्यावे भी वो, आत्म मजाका हो गया;
मेरे लीये तो नाथ का, ये ही सहारा हो गया ॥
पार्श्व जिया मीलन तो दे, सहेजे मुजे हीलन तो दे;
मेरा लगा रहा है दील, तेरा तीराना हो गया ॥
मायाका खेल खेल के, आंसु वहाके चल दीये;
लब्धि की लय लगी रही, मुक्ति मीलाना हो गया ॥

(तर्जः—चुप के चुप के बोल मैना.)

सोहं सोहं बोल मनवा (२) सिद्ध स्वरूप तब पायेंगे—सो०
केवल भारी दरशन जारी, प्रथम वहां दीखायेंगे—सि० ॥

अज अविनाशी सुख के विलासी, फिर कभी ना रुलायेंगे;
स्थिरता धारी समता क्यारी, ज्योति से ज्योति मीलायेंगे—सि०॥

भविको द्वार ये खुल जाय प्यारे अय चेतन,
न टेडे मेडे को लगता पता ये अय चेतन,
तु जानता है के मुक्ति का यह आसन है,
लगा पता है मुझे जिन ध्याये अय चेतन,
अब न विछडने दुंगा जिन को, लब्धि की लहेर मीलायेंगे सि०॥

(तर्जः—सावन की ऋतु आइ रे०)

प्रभु की पूजा रचावो रे, मिले मुक्ति नगरीयां,
मुक्ति नगरीयां शिवसुख वहीयां ॥ प्रभु की० ॥

नृत्य पूजा रावणने कीनी,
तीर्थंकर गोत्र बंधाइ रे ॥ मिले० ॥ प्रभु० ॥

पुष्प पूजा नागकेतुने कीनी,
केवल लक्ष्मी घर आइ रे॥ मिले० ॥ प्रभु० ॥

तीलक पूजा दमयंतीने कीनी,
ललाटे तिलक सोहाइ रे ॥ मिले० ॥ प्रभु० ॥

द्रौपदीने जिनप्रतिमा पूजी,
ज्ञातासूत्र में गवाइ रे ॥ मिले० ॥ प्रभु० ॥
श्रीपाल राजा ने मयणा सुंदरी,
नवपद महिमा बढाइ रे ॥ मिले० ॥ प्रभु० ॥
अष्टप्रकारी जिनपूजा रचाइ,
घर घर मंगल वधाइ रे ॥ मिले० ॥ प्रभु० ॥
आत्मकमल में लब्धि मिलन से,
भुवन हर्ष बढाइ रे ॥ मिले० ॥ प्रभु० ॥

(तर्जः-न जाउं कीधर आज मोरी नाव चली रे०)

यह प्यारी प्यारी आज मेरी आश फली रे,
फली रे फली रे मेरी आश फली रे।
मेरे मन की आश फली जीवन की आश फली,
सुन्दर सुरत प्रभु की आज मली रे ॥ यह० ॥
मन की भ्रमण को, पल में हर दी,
भक्ति फोरम जीवन में भर दी।
खीली खीली आज जीवन की कली रे ॥ यह० ॥
मनहर मूरत देखी मन मेरा डोले,
रहेन सवेरा प्रभु वीर वीर बोले।
वीर जिणंदा रहा जो मेरे मन में सदा,
तो यशोभद्र चले मुक्ति गली रे ॥ यह० ॥

(तर्ज–चल चल चमन के बाग में.)

मैं आया तेरे द्वार पर कुछ लेकर जाउंगा ।
अपने सुख दुःख की सारी बातें नाथ सुनाउंगा ॥ मैं० ॥

जब कि तेरा कहलाता हूं, मैं सेवक दुनिया में ।
तब क्यों कर अपना जीवन, दुःखमय नाथ बिताउंगा ॥ मैं० ॥

तू वीतराग रहता है इस से, यह दुःख पाना है ।
पर तुझ को तज मैं औरों का, नहीं दास कहाउंगा ॥ मैं० ॥

अपने अनन्त सुखमें से मुझको, तुं कुछ दे देगा ।
तो हरि–कवीन्द्र होकर मैं, सुख से नित गुण गाउंगा ॥ मैं० ॥

॥ महावीर स्वामी का पालणा ॥

(तर्जः–छोटे से बलवा मोरे आंगना में.)

माता त्रिशला के घर के पालणे में महावीर झुले ।
झुले सिद्धारथ के द्वार, वो तो महावीर झुले ॥ मा० ॥
सोने के पारणे में हीर की है दोरी,
रत्नजडित है अपार, वो तो० ॥ माता० ॥
इंद्र इंद्राणी पूजन कुं आवे, मेरुशिखर न्हवराय,
जैन शासन जयकार, वो तो० ॥ माता० ॥
त्रिभुवन नायक वीर कहावे,
दरस करत दुःख जाय, वो तो० ॥ माता० ॥

राजा सिद्धारथ धन दीयंता,
लक्ष्मी देवे वो अपार, वो तो० ॥ माता० ॥

(तर्ज-गोपिचंद लड़का)

आदि जिनेश्वर कीयो पारणो, आ रस सेलडी ॥ टेर ॥
घडा एक सो आठ सेलडी, रस भरिया छेनीका ।
उलट भाव श्रेयाँस वोहराया, मांड दीवी या सब बुकाए ॥आ०॥
देव दुदंभी बाज रही है, सौनैआरी बरखा ।
बारे माससुं कियो पारणो, गई भूख सब तीरखारे ॥आ०॥
रिद्धिसिद्धि कारज मनो कामना, घरघर मंगलाचार ।
दुनिया हर्ष बधावणासी रे, आखातीज तहैवार रे ॥ आ० ॥
संकट काटो विघ्न निवारो, राखो हमारी लाज ।
बेकर जोडी नन्दु कहता, रिखभदेव महाराज रे ॥आ०॥

श्री पर्युषण पर्वका स्तवन ।

(तर्ज-गोपीचंद का लडका बादल बरसे रे)

पर्युषण में मैं वीतराग, भजूं भावसे । टेर ।
श्री जिनराज जगतगुरु स्वामी, आतमरामी नामी ।
अंतरजामी, बहु गुणधामी, आरामी अभिरामी रे ॥ प० ॥
श्रीजिन आतम अरु निज आतम, रूप अनूप विचारे ।
जिन दर्शन निज दर्शन करके, भेद खेद सब टारे रे ॥प०॥

पर्यूषणमें समकित मिथ्या, मिश्रमोहनी टारी ।
प्रथम अनन्तानुबन्धी की, चौकडी दूर निवारी रे ॥ प० ॥

काल अनादि पुदगल संगी, बहिरातम वेढंगी ।
अंतर गुण चंगी होकर के, हुआ परमपद रंगी रे ॥ प० ॥

पर्युषण में सुरगणनायक, हरि नन्दीश्वर जावें ।
तैसे ही जिनमन्दिर में. जिन वन्दुं में बहु भावे ॥ प० ॥

(तर्ज-घुंघट के पट खोल.)

आनंद रस रंगरोल, बनी प्रभु भजेंगे,
जाप जपी अणमोल, बुरे कर्मो तजेंगे । आनंद० । टेर ।
जा मंदिर कर जिन दरसन तुं, ज्ञान नयन झट खोल;
पुरि मुक्ति सजेंगे, आनंद रस० ॥ १ ॥

आंतरो.

चंचल जीवनका क्या भरोसा, बुद्धि तुला में तेरी तोल;
ज्ञान चरणका लेले सहारा, वाते तजो डामाडोल;
भवभ्रमणको छोड दीयो तुम, बजावो प्रभुगुण ढोल;
नहिं जगमें लजेंगे, आनंद रस० ॥ २ ॥

आंतरो.

गुण गंभीर प्रभु वीर भजनसे, हरो करमकी पोल;
उच्च शरण ले करलो किनारा, सच्चा करी निज कोल;

आत्म कमलकी लब्धि प्रकाशे, उछले ज्ञानकी छोल;
वाजे यशके वजंगे, आनंद रस० ॥ ३ ॥

(तर्ज—मथुरामां खेल खेली आव्या)

वीर तारुं नाम व्हालुं लागे हो स्वाम, शिवसुख दाया । टेर ।
क्षत्रियकुंडमां जन्म्या जिणंदजी,
दिगकुमरी हुलराया हो स्वाम ॥ शि० ॥
माथाना मुगट छो, आंखोना तारा,
जन्मथी मेरु कंपायो हो स्वाम ॥ शि० ॥
मित्रोनी साथे रमत रमतां,
देवे भुजंगरूप ठायो हो स्वाम ॥ शि० ॥
निर्भय नाथे भुजंग फेंक,
आमल क्रीडाने सोहाय हो स्वाम ॥ शि० ॥
महावीर नाम देवनाथे त्यां दीधुं,
पंडित विस्मय पाम्या हो स्वाम ॥ शि० ॥
चारित्र लई प्रभु कर्मो हटाई,
केवलज्ञान प्रगटाया हो स्वाम ॥ शि० ॥
हिंसा मृषा चोरी मैथुन वारी,
परिग्रह बुरा बताया हो स्वाम ॥ शि० ॥
आत्म कमलमां शैलेसी साधी,
शिव लब्धि उपाया हो स्वाम ॥ शि० ॥

होली स्तवन ।

जय बोलो रे पास जिनेसरकी परमेसरकी । जय बोलो । टेर ।
मस्तक मुगट सोहे मनमोहन, अंगिया सोहे केशरकी ॥ ज० ॥
त्रिभुवन ज्योति अखंडित तनकी, श्याम घटा जैसे जलधरकी॥ज०॥
बालपणे प्रभु अद्भुतज्ञानी, करुणा कीधी विषधरकी ॥ ज० ॥
कमठ उडाल वाय ज्यूं बादल, जीत करी अपणे घरकी ॥ ज० ॥
मात वामा उदरे जिन जाया, राणी अश्वसेन नरेसरकी ॥ ज० ॥
अष्ट करम दल सबल खपाये, श्रेणि चढ्या जे शिवपुरकी ॥ ज० ॥
कहे जिनचंद्र मेरे प्रभु पारस, जैसी छाया सुरतरुकी ॥ ज० ॥

(तर्ज)

मैं तो दीवाना प्रभु तेरे लिये रे ॥ टेर ॥
चंपो चंपेली ने और मोगरो, फुलनके हार प्रभु तेरे लिये रे ॥मैं०॥
केशर चंदन भरी भरी गोली, अंगियां रचाउँ प्रभु तेरे लिये रे॥मैं०॥
मस्तक मुकुट कानोंमें कुण्डल, रत्नोंका हार प्रभु तेरे लिये रे ॥मैं०॥
ओसियां मंडली अर्ज करत है, आत्मकल्याण प्रभु तेरे लिये रे॥मैं०॥

(तर्ज–कडखाकी)

स्वामी रिसहेसरु, दीठो में सुरतरु ।
सुनिजर करी प्रभु सुजस लीजै ॥ स्वा० ॥ १ ॥
आत्मगुण तुमतणो, प्रगट सोहामणो ।
आदि अनंत स्थिति, सुख लहीजै ॥ स्वा० ॥ २ ॥

ध्येयना ध्यायनो, ध्याता निजगुण लहे ।
भाव उल्लासथी, कर्म छीजै ॥ स्वा० ॥ ३ ॥

साध्य साधकदशा, अनुभवी आतमा ।
बाध्य बाधकपणो दूर कीजे ॥ स्वा० ॥ ४ ॥

एक प्रदेशमां, अनंत सुख तें लह्यो ।
तेहनो अंश प्रभु मोय दीजै ॥ स्वा० ॥ ५ ॥

त्रण जग नाथ तुं सेवकों सुखकरूं ।
अवर दुजो नहीं कोय दीसे ॥ स्वा० ॥ ६ ॥

विनती मानजो, सुजस मुज आपजो ।
जिनकृपाचंद्रसूरि, जय वरीजै ॥ स्वा० ॥ ७ ॥

(तर्ज)

मन लाग्युं मारुं मन लाग्युं प्रभु तारा ध्यानमां ॥ प्रभु० ॥
खान न सूझे, पान न सूझे, तारा ध्यानमां ।
मान अने अपमान न सूझे, तारा ध्यानमां ॥ १ ॥
तू प्रभु त्राता, शिवसुख दाता, तारी नामना ।
सुरवर नरवर, मुनिजन गुणीजन, तारा ध्यानमां ॥ २ ॥
स्तवन पूजन, तेरी करिये स्वामी-पूरो कामना ।
शिव सुख आपो, भवदुख कापो, रहिये ध्यानमां ॥ ३ ॥

(तर्ज-सरीता कहां भूल आई प्यारी नणदोइयां)

प्रभुजी ! नहीं भूलना हमको कभी प्यारे प्रभुजी ॥ टेर॥

गुण गावे प्रभु हम तेरे, सुन अर्जी सब केरी ।
अष्टकर्म जंजाल मिटा दो, टालो भवकी फेरी ॥प्रभुजी०॥१॥

महिमा तेरी पार न पावे, गुण अनन्त भंडारी ।
सुरनर कथन करे जो तेरा, कहते आवी पारी ॥प्रभुजी०॥२॥

भरे अनन्त अवगुणसे प्रभु हम, उनको ना संभारो ।
नैया भवसागरमें डूबे, जल्दी पार उतारो ॥ प्रभुजी० ॥ ३ ॥

और अधिक कहूं क्या तुझको, जानत दशा हमारी ।
अर्जी धनकी सुनकर अब तो, भवभ्रमण दे टारी ॥प्रभुजी०॥४॥

श्री जिन प्रतिमा स्तवन ॥

श्री जिन प्रतिमा हो जिन सारखी कही ए दीठा आणंद;
समकित विगडे हो संका कीजतां, जिम अमृत विष बिंद । श्री० ।१।

आज नही छे हो कोइ तीर्थंकर इहा, न कोइ अतिशयवंत;
श्री जिन प्रतिमानो हो एक आधार छे, आपे मुगति एकंत । श्री० ।२।

सूत्र सिद्धांत हो तर्क व्याकरण भण्या पंडित पण कहे लोक;
जिन प्रतिमाने हो माने नहीं, तेहनो सगलो फोक । श्री० ।३।

अर्हत् प्रतिमाने हो आगे नमोत्थ्युणं कहे, पुजा सत्तर प्रकार;
फल विण बोल्या हो हित सुख मोक्षना द्रोपदी अधिकार । श्री० ।४।

रायससेणी हो ज्ञाता भगवती, जीवाभिगम मझार;
ए सूत्र माने हो प्रतिमा माने नहीं, मारी माने वलि वांझ। श्री०।५।

साधुने बोल्या हे भावस्तवन भला, श्रावकने द्रव्यभाव;
ए बेहु करणी हो करतां निस्तर्या, जिन प्रतिमा प्रभाव। श्री०।६।

पारसनाथ हो तुज प्रसादथी, सदहणा मुज एह;
भव २ होजो हो समयसुंदर कहे, जिन प्रतिमा सुं नेह। श्री०।७।

॥ दादा गुरु का स्तवन ॥ १ ॥

तेरा अमृत प्याला पिलादो मुझे,
तेरे अनुभव रंग में रंगालो मुझे।

मैं तो परदे पर जमीके, तु रहा आसमान में;
कैसे सोहोवत होय तेरी, नहीं मेरे आसान में;
मेरा खत संदेशा न पहुँचे तुझे ॥ तेरा० ॥ १ ॥

अगर तु अरजी पे मरजी, करो मुझपर कर रहम;
बंदा अपना जान महिर, दे दरस कर दे महम;
ऐसा तेरा भरोसा है पुरा मुझे ॥ तेरा० ॥ २ ॥

लोलगी कीया उजेरा, पाक मोहबत के तणे;
दीदार का पाया नफा जब, दूर हट गये दुःख घणे;
सब हांसील मेरी मिलादो मुझे ॥ तेरा० ॥ ३ ॥

वैन तेरे हे रसीले, नैन में रहमी भरी;
शान्ति सुरत कुशल सुरत, दत्त गुरु महिमा वरी;
शुद्ध मन से ध्यावत राम तुझे ॥ तेरा० ॥ ४ ॥

॥ दादा गुरु का स्तवन ॥ २ ॥

इस दुनिया में तेरो यश छाय रह्यो रे ॥ टेर० ॥
अनुपम महिमा कान सुनी तुम, मनवांछित फल पाय रह्यो रे ॥१॥
राजराजगुरु राजचिन्तामणि, सुरतरुछाया छाय रह्यो रे ॥ २ ॥
सजलमेघ ज्युं अमृत बुंदे, भक्त हृदय वरपाय रह्यो रे ॥ ३ ॥
चरण न छोड मुख नहीं मोडूं, तेरी लगन लय लाय रह्यो रे ॥४॥
राम धाम तु हीं हे सद्गुरु, घट में ज्योति जगाय रह्यो रे ॥५॥

॥ दादा गुरु का स्तवन ॥ ३ ॥

दया कर दरस दीजे प्यारे गुरुदेवा ।
चरणोंमें मुझको शरण दीजे प्यारा गुरुदेवा ॥ टेर ॥
चिन्तामणी और कामधेनु सम, मेरे तुमहिज देवा ।
राजा राणा भरे हाजरी, करे तुमारी सेवा ॥ दया० ॥ १ ॥
गुलसन गुलका हार बनाऊं, धूप सुगंधी खेवा ।
सुरनर गुणिजन करे आरती, भोग लगावे मेवा ॥ दया० ॥ २ ॥
जिनदत्त जिनचंद कुशल सूरि गुरु, तुमसे लगाऊं नेहा ।
पड़ी नाव मझधार बीचमें, पार लगावे देवा ॥

श्री गुरुराज लाज रख साहिब, देत तुम्हारी दूवा ।
और देव सब छोड़के दादा, चरण आपका छूपा ॥ दया० ॥ ४ ॥
चारित्र की अब विनती सुनीजे, दरसन वहीलो दीजे ।
सब कष्टोंको दूर हटाकर, मनवंछित फल दीजे ॥ दया० ॥ ५ ।

दादा गुरु का स्तवन ॥ ४ ॥

कुशल करना कुशल करना, कुशल गुरुराज शासनमें ।
तुम्ही हो शक्तिमय निज भक्त-विघनों के विनाशन में ॥ टेर ॥
महां अन्धेर में सोते निरखलो, अपने भक्तों को ।
उठाकर आप अब जल्दी, लिवा लाओ प्रकाशन में ॥ कु० ॥१।
अपूरव अपनी ज्योति का, दिखावें आप अब जल्वा ।
कि जिससे जोश भी फैले, हमेशा खूब तनमन में ॥ कु० ॥२।
है भूले भक्त पर तुमको, भूलाना यों न लाजिम है ।
दुआ है आपसे इतनी, बढा दो भक्त जन-धन में ॥ कु० ॥३
सदा हरि आपकी स्वामी, दया की बेल भक्तों पर ।
करे छाया हरे माया, अशांति हो न जीवन में ॥ कु० ॥४

श्री महावीर स्वामीका स्तवन ।

भगवान महावीर जो भारत में न आते,
दुःख दर्द जमाने का, कहो कौन मिटाते (२)

मंदिर मठों में तूँकी जला कर के होलियां,
यज्ञो में पशुओं की जला करती टोलियां;
भगवान महावीर जो इनको न बचाते,
दुःख दर्द जमाने का कहो कौन मिटाते। भ० ॥ १ ॥

भारत की बनी देवीयां थीं पांव की जूती,
थी सूद्र वर्न वाली बनी जाति अछुती;
भगवान महावीर जो छाती न लगाते,
दुःख दर्द जमाने का कहो कौन मिटाते। भ० ॥२॥

महावीर अगर दुनिया में अवतार न लेते,
शुद्ध धर्म दया धर्म का उपदेश न देते;
गांधी को अहिंसा का शब्द कौन सुनाते,
दुःख दर्द जमाने का कहो कौन मिटाते। भ० ॥३॥

महावीर अगर आज भी संसार में होते,
अंग्रेज जर्मनी के महायुद्ध न होते:
हिटलर को वहि शान्तिका संदेस सुनाते,
दुःख दर्द जमाने का कहो कौन मिटाते। भ० ॥४॥

॥ श्री आदीश्वर भगवान की आरति ॥

अपछरा करती आरति जिन आगे, हां रे जिन आगे रे जि
तुं रे एतो अविचल सुखडां मांगे, हां रे नाभिनंदन पास। अ०

ता थेई नाटक नाचती पाय ठमके, हां रे दोय चरणे झांझर झमके,
हां रे सोवन घुंघरी घमके, हां रे लेती फुदडी बाल । अ० ॥ २ ॥
ताल मृदंग ने वांसली डफ वीणा, हां रे रुडा गावंती स्वर झीणा,
हां रे मधुर सुरासुर नयणा, हां रे जोती मुरडुं निहाल । अ० ॥३॥
धन्य मरुदेवा मातने प्रभु जाया, हां रे तोरी कंचन वरणी काया,
हां रे मैंतो पूरव पून्ये पाया, हां रे देख्यो तोरो देदार । अ० ॥४॥
प्राणजीवन परमेश्वर प्रभु प्यारो, हां रे प्रभु सेवक छुं हुं तारो,
हां रे भवोभवनां दुःखडां वारो, हां रे तुम दीनदयाल । अ० ॥ ५ ॥
सेवक जाणी आपनो चित्त धरजो, हां रे मोरी आपदा सघली हरजो,
हां रे मुनिमाणेक सुखियो करजो, हां रे जाणी पोतानो बाल ।अ०॥६॥

॥ मंगल चार ॥

कीजे मंगल चार, आज घर नाथ पधार्या ।　　॥ कीजे० ॥
पहले मंगल प्रभुजीने पूजुं, घसी केसर घनसार　　॥ आज० ॥
बीजे मंगल अगर उखेवुं, कंठ थवुं फूलहार　　॥ आज० ॥
त्रीजे मंगल आरती उतारूं, घंट बजावुं रणकार　　॥ आज० ॥
चोथे मंगल प्रभुगुण गाउं, नाचुं थई थईकार　　॥ आज० ॥
रूपचंद कहे नाथ निरंजन, चरणकमल बलिहार　　॥ आज० ॥

Ratnakara Panchavimshatika

Translated from Samskrit by K. P. Modi,
B. A. LL. B. Ahmedabad.

1. May he ever be victorious who is blessed pleasure house of spiritual wealth before whose lotus feet prostrate even the lords of gods and men, who is omiscint, who is best because of his superhuman qualities and who is the store house of knowledge and art.

2. Oh, a support of the three worlds, Mercy incarnate, physician to remove the malady of worldly existence, not easy to be surmounted, free from all attachment, all knowing Lord! I with child like simplicity, beg to lay the following before you.

3. Does not a child, impelled by his child nature prattle something before his father without (any idea of what he has to say) previous thought? In the same way Oh Lord, I full of [illegible]pentance truly put my ideas before you.

4 No charity is done by me, no good life has been led by me, no chastity has been observed by me, no austerity has been performed by me, no good thoughts have been thought by me in this life. Oh Lord, fruitless is my journey in this life.

5. I am burnt by fire of anger, stung by a wicked snake of avarice, swallowed by a cobra of pride, and bound by a snare of deceit. How can I worship Thee ?

6. Oh Lord of the world! Oh best of Jains! no good deed has been performed by me in previous life, and I find no happiness in this life. Persons like me are born simply to add up the number of lives.

7. Oh Lord of amiable conduct! I feel my heart to be harder than a stone because it was not moved with feelings of deep bliss, even though it had the good fortune to see your moonlike face.

8. Oh Lord!; after wandering in many lives I obtained through you the three jewels, difficult to obtain even with great pains and even those jewels I lost through sleep of carelessness.

9. I liked asceticism simply to deceive others, I preached religion simply to please the people, I

acquired knowledge to combat with others, Oh Lord!; how much should I describe my ridiculous life?

10. I have sullied my mouth by slandering others, my eyes by looking on wives of others to lust after them, my mind by thinking harm to others, Oh Lord, what shall be my fate?

11. Oh Lord, what I, being blind by passion, have endured under the influence of pain caused by the force of cupid, I lay before you through shame. You, being Omniscient know all that.

12. Oh Lord, it was due to my mental delusion that I allowed Prameshti-Mantras (obaisance to the liberated souls, Tirthankers poniffs, teachers and good men) to be eclipsed by other Mantras again literature to be ignored by false scriptures and that I was inclined to do wrong acts under the influence of bad gods.

13. I, a fool, having left you who had come within the range of my eye, pondered on the amorous pastimes of beautiful women as regards their glances, breasts deep navel loins etc.

14. Oh Saviour! How is it that a partice of me ntal attachment that stuck to me by gazing at the faces of rolling eyed women, is not gone, though washed in the ocean of pure sacred liter-

15. I am neither beautiful in person, nor do I possess a collection of virtues. I have no pure grace of arts. I do not possess any power of *resplendent* lusture, still, I am troubled by egoism.

16. Life soon draws near the end, but not my inclination to sin I grow old, but not my desire for sense-enjoyments; I made efforts for preparing medicines, but not for leading a religious life, Oh Lord! there is no limit to my self delusion.

17. Oh Lord! fie upon me that I listened to the evil speech of the worldly persons that there is no soul, no merit, no future life and no sin, though you, the sun of absolute knowledge were shining clearly.

18. Although I have reached human stage my life is like crying in the wilderness because I did not worship God, did not revere worthy persons and I did neither observe lay mans nor ascetic's religious duties.

19. Oh Lord of Jinas! look at my folly. Iran after, imaginary things like the wish-fulfilling cow, wish-fulfilling tree and the wish-fulfilling jewel, but did not run after Jain religion which bestows real happiness.

20. I, a base one always thought of pleasures of enjoying good things, but did not view them as the womb of diseases; I thought of the increasing of wealth and not that of death; I thought only of a women, but did not consider her as the cause of hell-bondage.

21. I could find no room in the heart of the good by pure conduct I did not get fame by doing benevolent actions, I did not acquire religious merit by propaganding religion etc.; Alas my life is really wasted.

22. No feeling of dispassion arose in me by hearing the preachings of my preceptors. I could not my peace by hearing the words of wicked men. Oh Lord ! I have not a particle of spiritual knowledge how can I, then, cross this ocean of worldly existence ?

23. In my previous life I earned no religious merit. I shall not do it in future life. If I am such, then Oh Lord ! all the three lives the past the present and the future are ruined.

24. Oh Venerable one ! Oh Lord ! what is the use of narrating my life in detail before you in vain. As you know the nature of the three worlds what is my life to you !

15. I am neither beautiful in person, nor do I possess a collection of virtues. I have no pure grace of arts. I do not possess any power of resplendent lusture, still, I am troubled by egoism.

16. Life soon draws near the end, but not my inclination to sin I grow old, but not my desire for sense-enjoyments; I made efforts for preparing medicines, but not for leading a religious life, Oh Lord ! there is no limit to my self delusion.

17. Oh Lord ! fie upon me that I listened to the evil speech of the worldly persons that there is no soul, no merit, no future life and no sin, though *you*, the sun of absolute knowledge were shining clearly.

18. Although I have reached human stage my life is like crying in the wilderness because I did not worship God, did not revere worthy persons and I did neither observe lay mans ascetic's religious duties.

19. Oh Lord of Jinas ! look at my folly. I.. after, imaginary things like the wish-fulf cow, wish-fulfilling tree and the wish-fu.. jewel, but did not run after Jain religion whic bestows real happiness.

20. I, a base one always thought of pleasures of enjoying good things, but did not view them as the womb of diseases; I thought of the increasing of wealth and not that of death; I thought only of a women, but did not consider her as the cause of hell-bondage.

21. I could find no room in the heart of the good by pure conduct I did not get fame by doing benevolent actions, I did not acquire religious merit by propaganding religion etc.; Alas ! my life is really wasted.

22. No feeling of dispassion arose in me by hearing the preachings of my preceptors. I could not my peace by hearing the words of wicked men. Oh Lord ! I have not a particle of spiritual knowledge how can I, then, cross this ocean of worldly existence ?

23. In my previous life I earned no religious merit. I shall not do it in future life. If I am such, then Oh Lord ! all the three lives the past, the present and the future are ruined.

24. Oh Venerable one ! Oh Lord ! what is the use of narrating my life in detail before you in vain. As you know the nature of the three worlds, what is my life to you ?